



2024: CGHC: 48286-DB
प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
कर प्रकरण क्रमांक 225 वर्ष 2024

(आयकर अपीलीय अधिकरण, रायपुर पीठ, रायपुर द्वारा
आई.टी.ए. क्रमांक 304/आरपीआर/2024 में पारित
आदेश दिनांक 20-09-2024 से उद्धृत)

नवोदित समाज सेवी संस्था, चरमा, द्वारा हरीश चंद्र कांगे,
ग्राम/पोस्ट कुरुटोला, तहसील चरमा, बी.ओ. कुरुटोला, कांकेर,
छत्तीसगढ़ – 494337

-----अपीलार्थी

बनाम

आयकर अधिकारी (ITO), वार्ड जगदलपुर, झंकार टॉकीज के पीछे, जगदलपुर, छत्तीसगढ़ –
494001

-----प्रत्यर्थी

अपीलार्थी की ओर से: श्री निखिलेश बेगानी एवं श्री अपूर्व गोयल, अधिवक्ता।
प्रत्यर्थी की ओर से: श्री अजय कुमारानी, अधिवक्ता, श्री अमित चौधरी,
आयकर विभाग के स्थायी अधिवक्ता की ओर से।

युगल पीठ

माननीय श्री न्यायमूर्ति संजय के. अग्रवाल एवं
माननीय श्री न्यायमूर्ति राधाकिशन अग्रवाल
बोर्ड पर निर्णय

(09/12/2024)

संजय के. अग्रवाल, न्यायमूर्ति

- आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 260 क के अधीन प्रस्तुत यह कर अपील, विधि के निम्नलिखित सारवान् प्रश्न को तैयार करते हुए दिनांक 26-11-2024 को सुनवाई हेतु स्वीकार की गई थी: –



“क्या आयकर अपीलीय अधिकरण का यह अभिनिर्धारित करना न्यायोचित है कि अपीलार्थी अपील प्रस्तुत करने में हुए 55 दिनों के विलंब के लिए पर्याप्त कारण दर्शाने में विफल रहा है, जबकि उक्त निष्कर्ष अभिलेख के प्रतिकूल है ? ”

2. उपरोक्त प्रश्न निम्नलिखित तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में विचारार्थ उत्पन्न होता है: -
3. अपीलार्थी संस्था, जिसका पंजीकरण संस्था पंजीयक, रायपुर संभाग के समक्ष दिनांक 23-08-2004 को हुआ था, ने आयकर अधिनियम, 1961 (संक्षेप में, 'आयकर अधिनियम') की धारा 12 क के तहत अनंतिम पंजीकरण हेतु प्ररूप क्रमांक 10 क में दिनांक 02-12-2022 को आवेदन प्रस्तुत किया था। आयकर आयुक्त (छूट), भोपाल ने दिनांक 09-12-2022 को अपीलार्थी के पक्ष में प्ररूप क्रमांक 10AC में आयकर अधिनियम की धारा 12 क के तहत अनंतिम पंजीकरण प्रदान करने का आदेश जारी किया। अनंतिम पंजीकरण प्राप्त करने के पश्चात, दिनांक 25-09-2023 को अपीलार्थी संस्था ने धारा 12 क के तहत स्थायी पंजीकरण हेतु प्ररूप क्रमांक 10AB में आवेदन प्रस्तुत किया। अपीलार्थी संस्था सहित संबंधित पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करने के पश्चात, दिनांक 19-02-2024 को आयकर आयुक्त (छूट) ने अततः धारा 12 क के तहत पंजीकरण के आवेदन को खारिज कर दिया, जिसकी सूचना अपीलार्थी को दिनांक 02-03-2024 को दी गई। दिनांक 02-03-2024 का उक्त आदेश, आयकर अधिनियम की धारा 253 के तहत आदेश की प्रति प्राप्त होने की तिथि से 60 दिनों के भीतर आयकर अपीलीय अधिकरण के समक्ष अपील योग्य था। किंतु अपीलार्थी का यह मामला है कि अपने अधिवक्ता की गलत सलाह के कारण, उसने धारा 12 क के तहत पंजीकरण के लिए पुनः आवेदन कर दिया। हालांकि, उक्त आवेदन के लंबे समय तक लंबित रहने के कारण, अपीलार्थी ने धारा 253 के तहत सांविधिक अपील दायर करने का निर्णय लिया और तब तक अपील अपनी परिसीमा से 55 दिन व्यतीत हो जाने के कारण बाधित हो चुकी थी। आयकर अधिनियम की धारा 253 की उपधारा (5) के प्रावधानों के अनुसार, आयकर अपीलीय अधिकरण को उपधारा (3) या उपधारा (4) में संदर्भित प्रासंगिक अवधि की समाप्ति के बाद भी अपील स्वीकार करने या प्रति-आक्षेपों का ज्ञापन दाखिल करने की अनुमति देने की शक्ति प्राप्त है, यदि वह संतुष्ट हो कि परिसीमा की अवधि के भीतर अपील प्रस्तुत न करने का पर्याप्त कारण दर्शाया गया है। अपीलार्थी ने यद्यपि विलंब माफी हेतु आवेदन के साथ शपथ-पत्र प्रस्तुत किया, जिसमें अधिवक्ता की गलत सलाह के कारण हुए विलंब को पर्याप्त कारण के रूप में दर्शाया गया था, क्योंकि उसने पहले धारा 12 क के तहत पंजीकरण हेतु नया आवेदन दायर किया था, और



अंततः अपनी भूल का एहसास होने पर धारा 253(1) के तहत अपील दायर की, जो परिसीमा द्वारा बाधित थी। यद्यपि अभिलेख पर यह स्थिति स्वीकृत है कि राजस्व ने विलंब माफी के आवेदन पर कोई जवाब दाखिल नहीं किया और न ही आवेदन में कथित तथ्यों एवं विलंब के कारणों का खंडन किया, फिर भी आक्षेपित आदेश द्वारा विद्वान आयकर अपीलीय अधिकरण ने यह धारित करते हुए आवेदन को खारिज कर दिया कि अपील दायर करने में हुए विलंब के लिए पर्याप्त कारण नहीं दर्शाया गया है, और परिणामस्वरूप अपील को भी निरस्त कर दिया।

अपीलार्थी संस्था द्वारा इस कर अपील के माध्यम से इसी आदेश को चुनौती दी गई है, जिसे इस निर्णय के प्रारंभिक पैराग्राफ में उल्लिखित विधि के सारवान् प्रश्न को तैयार करते हुए स्वीकार किया गया है।

4. अपीलार्थी संस्था की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री निखिलेश बेगानी ने तर्क दिया कि आयकर अपीलीय अधिकरण द्वारा अपील प्रस्तुत करने में हुए 53 दिनों (वास्तविक 55 दिन) के विलंब को माफ न करना पूरी तरह से अनुचित है, क्योंकि विलंब माफी का आवेदन शपथ-पत्र द्वारा समर्थित था जिसे आक्षेपित आदेश में उद्धृत भी किया गया है। इसके अतिरिक्त, पर्याप्त कारण का राजस्व द्वारा खंडन भी नहीं किया गया था, फिर भी विद्वान अधिकरण ने आवेदन और अपील को खारिज कर दिया, जो पूरी तरह से अभिलेख के प्रतिकूल है। वह 'कलेक्टर, भूमि अर्जन, अनंतनाग एवं अन्य बनाम मुसम्मात कातिजी एवं अन्य' के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करेंगे और यह निवेदन करेंगे कि विलंब की माफी हेतु आवेदन पर विचार किया जाना चाहिए था, क्योंकि पर्याप्त कारण दर्शाया गया था जिसका राजस्व द्वारा खंडन नहीं किया गया था। उस दृष्टि से, वर्तमान अपील स्वीकार किए जाने योग्य है और विलंब को माफ करने के पश्चात, आयकर अपीलीय अधिकरण को गुण-दोष के आधार पर अपील का निर्णय करने का निर्देश दिया जाए।

5. आयकर विभाग/राजस्व के स्थायी अधिवक्ता श्री अमित चौधरी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अजय कुमारानी यह तर्क देंगे कि चूंकि स्थायी पंजीकरण के आवेदन को खारिज करने वाला आदेश आयकर अधिनियम की धारा 253(1) के तहत अपील योग्य था, अतः उपचार उक्त प्रावधान के तहत अपील दायर करना था जिसका उपयोग अपीलार्थी संस्था द्वारा उचित समय पर नहीं किया गया है, इसलिए निर्धारित अवधि के भीतर अपील प्रस्तुत न करने के लिए अपीलार्थी संस्था द्वारा दर्शाए गए कारण को पर्याप्त कारण नहीं कहा जा सकता है और इस



प्रकार, आयकर अपीलीय अधिकरण ने विलंब माफी के आवेदन को सही ढंग से खारिज किया है और परिणामस्वरूप, अपील भी सही ढंग से निरस्त की गई है।

6. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और उनके द्वारा ऊपर दिए गए परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार किया है तथा अभिलेख का अत्यंत सतर्कता के साथ अवलोकन भी किया है।
7. निर्विवाद रूप से, स्थायी पंजीकरण हेतु आयकर अधिनियम की धारा 12 क के तहत अपीलार्थी का आवेदन सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 19-02-2024 के आदेश द्वारा सम्यक् जाँच के पश्चात खारिज कर दिया गया था, जिसकी सूचना अपीलार्थी को दिनांक 02-03-2024 को दी गई थी, जिसके विरुद्ध अपीलार्थी ने दिनांक 25-06-2024 को आयकर अपीलीय अधिकरण के समक्ष विलंब माफी के आवेदन और शपथ-पत्र के साथ अपील प्रस्तुत की। अपील दायर करने में हुए विलंब हेतु आवेदन में दर्शाया गया कारण यह है कि दिनांक 19-02-2024 के आदेश को चुनौती देने के बजाय, अपीलार्थी संस्था ने दिनांक 05-03-2024 को आयकर अधिनियम की धारा 12 क के तहत पंजीकरण हेतु पुनः आवेदन किया और अंततः, धारा 253(1) के तहत अपील न करने की अपनी भूल का एहसास होने पर, अपीलार्थी संस्था ने दिनांक 25-06-2024 को अपील दायर की। यद्यपि राजस्व को नोटिस दिया गया था और वह अपील में उपस्थित हुआ, किंतु राजस्व ने विलंब माफी के आवेदन पर जवाब दाखिल करना नहीं चुना और न ही शपथ-पत्र में बताए गए कारणों का खंडन करते हुए कोई शपथ-पत्र दाखिल किया, जिसमें स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि आयकर अधिनियम की धारा 12 क के तहत आवेदन की अस्वीकृति का आदेश प्राप्त होने पर, अपील दायर करने के बजाय, अपीलार्थी संस्था ने धारा 12 क के तहत पंजीकरण हेतु पुनः आवेदन करना चुना। उस दृष्टि से, चूंकि आयकर अपीलीय अधिकरण के समक्ष पर्याप्त कारण दर्शाने वाला एक अप्रतिवादित शपथ-पत्र था कि अपीलार्थी अधिवक्ता की गलत सलाह के कारण अपील दायर करने से वंचित रह गया था कि उसे पंजीकरण के लिए पुनः आवेदन करना चाहिए और बाद में, उसने धारा 253 के तहत सांविधिक अपील दायर की।
8. इस संबंध में, आयकर अधिनियम की धारा 253 की उपधारा (3) और (5) के साथ पठित धारा 253(1)(क) और (ग) के प्रावधानों को यहाँ लाभप्रद रूप से उद्धृत किया जा सकता है। आयकर अधिनियम की धारा 253 की उपधारा (1) के खंड (क) और (ग) इस प्रकार हैं: -

“253. अपीलीय अधिकरण को अपीलें।—(1) निम्नलिखित आदेशों में से किसी से भी व्यथित कोई निर्धारिती ऐसे आदेश के विरुद्ध अपीलीय अधिकरण को अपील कर सकता है—



(क) 1 अक्तूबर, 1998 के पूर्व उप-आयुक्त (अपील), या यथास्थिति, आयुक्त (अपील) द्वारा धारा 154, धारा 250, धारा 270 क, धारा 271, धारा 271 क, धारा 271 ककख, धारा 271 ककग, धारा 271 ककघ, धारा 271 या धारा 272 क के अधीन पारित किया गया कोई आदेश; या

**** * * * * *

(ग) निम्नलिखित द्वारा पारित कोई आदेश—

(i) प्रधान आयुक्त या आयुक्त द्वारा धारा 12 कक या धारा 12 कख के अधीन या धारा 80 जी की उपधारा (5) के खंड (vi) के अधीन या धारा 263 के अधीन या धारा 270 क के अधीन या धारा 271 के अधीन या धारा 272 क के अधीन पारित कोई आदेश या उसके द्वारा ऐसे किसी आदेश में संशोधन करते हुए धारा 154 के अधीन पारित कोई आदेश; या

(ii) प्रधान मुख्य आयुक्त या मुख्य आयुक्त या प्रधान महानिदेशक या महानिदेशक या प्रधान निदेशक या निदेशक द्वारा धारा 263 के अधीन या धारा 272 क के अधीन पारित कोई आदेश या उसके द्वारा ऐसे किसी आदेश में संशोधन करते हुए धारा 154 के अधीन पारित कोई आदेश; या

9. इसी प्रकार, आयकर अधिनियम की धारा 253 की उपधारा (3) और (5) इस प्रकार हैं: -

“(3) उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन प्रत्येक अपील उस तारीख के साठ दिन के भीतर फाइल की जाएगी, जिस तारीख को वह आदेश जिसकी अपील की जानी है, यथास्थिति, निर्धारिती को या प्रधान आयुक्त या आयुक्त को संसूचित किया जाता है:

परन्तु उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन किसी अपील के संबंध में, यह उपधारा इस प्रकार प्रभावी होगी मानो "साठ दिन" शब्दों के स्थान पर "तीस दिन" शब्द रख दिए गए हों।

(5) अपीलीय अधिकरण, उपधारा (3) या उपधारा (4) में निर्दिष्ट सुसंगत अवधि की समाप्ति के पश्चात किसी अपील को ग्रहण कर सकेगा या प्रति-आक्षेपों के ज्ञापन को फाइल करने की अनुमति दे सकेगा, यदि



उसका यह समाधान हो जाता है कि उस अवधि के भीतर उसे प्रस्तुत न करने के लिए पर्याप्त कारण था।”

10. आयकर अधिनियम की धारा 253 की उपधारा (5) का सूक्ष्म अवलोकन यह दर्शाता है कि आयकर अपीलीय अधिकरण को उपधारा (3) या उपधारा (4) में संदर्भित प्रासंगिक अवधि की समाप्ति के पश्चात अपील स्वीकार करने का अधिकार है, यदि वह इस बात से संतुष्ट हो कि उस तिथि से साठ दिनों के भीतर अपील प्रस्तुत न करने के लिए 'पर्याप्त कारण' था, जिस तिथि को अपील योग्य आदेश की सूचना, यथास्थिति, निर्धारिती या प्रधान आयुक्त या आयुक्त को दी गई थी।

11. आयकर अधिनियम की धारा 253 की उपधारा (5) में प्रयुक्त शब्दावली 'पर्याप्त कारण' का उदार निर्वचन किया जाना चाहिए ताकि सारवान् न्याय को बढ़ावा मिले और सामान्यतः अपीलों को प्राथमिकता देने में हुए विलंब को न्याय के हित में माफ किया जाना चाहिए, जहाँ विलंब की माफी माँगने वाले पक्ष पर कोई घोर लापरवाही या जानबूझकर की गई निष्क्रियता या सद्भाव की कमी का आरोप न लगाया जा सके।

12. शब्दावली "पर्याप्त कारण" कानूनी और पर्याप्त कारणों की उपस्थिति को इंगित करती है। पर्याप्त कारण ऐसा होना चाहिए जो न्यायालय को अपने न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए विलंब को क्षम्य मानने के लिए प्रेरित करे। पक्षकार को यह दिखाना चाहिए कि सद्भावपूर्वक कार्य करने के अलावा, उसने अपनी शक्ति और नियंत्रण के भीतर सभी संभावित कदम उठाए थे और बिना किसी अनावश्यक देरी के न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था। परीक्षण यह है कि क्या कोई कारण पर्याप्त है या नहीं, यह देखने के लिए कि क्या पक्षकार द्वारा सम्यक् सावधानी और ध्यान बरतकर इससे बचा जा सकता था। (देखें: बलवंत सिंह बनाम जगदीश सिंह)।

13. शब्दावली "पर्याप्त कारण" में अनिवार्य रूप से निष्कपटता, सद्भाव और युक्तियुक्तता का तत्व निहित है। (देखें: संकरण पिल्लई बनाम वी.पी. वेणुगुदुस्वामी)।

14. उच्चतम न्यायालय ने बसावराज बनाम भूमि अर्जन अधिकारी के प्रकरण में यह अभिनिर्धारित किया कि पर्याप्त कारण का अर्थ वह कारण है जिसके लिए किसी पक्षकार को उसकी अनुपस्थिति के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता। पक्षकार को लापरवाही या सद्भाव की कमी के साथ कार्य नहीं करना चाहिए था। 'अच्छे कारण' के प्रकरण में सुबूत की मात्रा कम होती है, जबकि 'पर्याप्त कारण' के प्रकरण में यह उच्चतर होती है।



15. रामलाल बनाम रीवा कोलफील्ड्स लिमिटेड के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि अवधि विस्तार के लिए आवेदन करने वाला पक्ष यह दिखाता है कि विलंब स्पष्टीकरण में उल्लिखित किसी भी तथ्य के कारण हुआ था, तो उसे पर्याप्त कारण माना जाएगा, और पर्याप्त कारण माने जाने के बाद, फिर यह प्रश्न उठ सकता है कि विवेकाधिकार का प्रयोग पक्ष के पक्ष में किया जाना चाहिए या नहीं।

16. इसी प्रकार, शकुंतला देवी जैन बनाम कुंतल कुमारी के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 न्यायालयों को एक विवेकाधिकार देती है, जिसका प्रयोग क्षेत्राधिकार के संबंध में उसी प्रकार किया जाना चाहिए जिस प्रकार न्यायिक शक्ति और विवेकाधिकार का प्रयोग उन सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए जो सुस्थापित हैं; 'पर्याप्त कारण' शब्दों का उदार निर्वचन किया जाना चाहिए ताकि सारवान् न्याय को बढ़ावा मिले, जब अपीलार्थी पर न तो लापरवाही, न निष्क्रियता और न ही सद्भाव की कमी का आरोप लगाया जा सके।

17. कलेक्टर, भूमि अर्जन, अनंतनाग (पूर्वोक्त) के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि विधायिका ने भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 को अधिनियमित करके विलंब को माफ करने की शक्ति प्रदान की है ताकि न्यायालय मामलों को 'गुण-दोष' के आधार पर निपटाकर पक्षकारों को सारवान् न्याय प्रदान कर सकें। रिपोर्ट के पैराग्राफ 3 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है: -

“3. विधायिका ने भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 को अधिनियमित करके विलंब को माफ करने की शक्ति प्रदान की है ताकि न्यायालय मामलों को 'गुण-दोष' के आधार पर निपटाकर पक्षकारों को सारवान् न्याय प्रदान करने में सक्षम हो सकें। विधायिका द्वारा प्रयुक्त शब्दावली "पर्याप्त कारण" पर्याप्त रूप से लचीली है ताकि न्यायालय कानून को अर्थपूर्ण तरीके से लागू कर सकें जो न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति करता हो—जो कि न्यायालयों जैसी संस्था के अस्तित्व का जीवन-उद्देश्य है। यह सर्वविदित है कि यह न्यायालय, इस न्यायालय में संस्थित मामलों में उचित रूप से उदार दृष्टिकोण अपनाता रहा है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि यह संदेश पदानुक्रम के अन्य सभी न्यायालयों तक नहीं पहुँचा है। और ऐसा उदार दृष्टिकोण सिद्धांत के रूप में अपनाया जाता है क्योंकि यह महसूस किया जाता है कि:



1. सामान्यतः एक मुकदमेबाज को अपील देर से दाखिल करने से कोई लाभ नहीं होता है।
2. विलंब माफ करने से इनकार करने का परिणाम यह हो सकता है कि एक गुणकारी मामला शुरुआत में ही खारिज हो जाए और न्याय का उद्देश्य विफल हो जाए। इसके विपरीत, जब विलंब माफ कर दिया जाता है, तो अधिकतम यह हो सकता है कि किसी प्रकरण का निर्णय पक्षकारों को सुनने के बाद गुण-दोष के आधार पर किया जाएगा।
3. "प्रत्येक दिन के विलंब को स्पष्ट किया जाना चाहिए" का अर्थ यह नहीं है कि एक पांडित्यपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। हर घंटे की देरी, हर सेकंड की देरी क्यों नहीं? सिद्धांत को तर्कसंगत, सामान्य ज्ञान और व्यावहारिक तरीके से लागू किया जाना चाहिए।
4. जब सारवान् न्याय और तकनीकी विचार एक-दूसरे के आमने-सामने हों, तो सारवान् न्याय के उद्देश्य को प्राथमिकता दी जानी चाहिए क्योंकि दूसरा पक्ष अनजाने में हुए विलंब के कारण अन्याय किए जाने के निहित अधिकार का दावा नहीं कर सकता।"
5. ऐसी कोई उपधारणा नहीं है कि विलंब जानबूझकर किया गया है, या दण्डनीय उपेक्षा के कारण, या दुर्भावना के कारण हुआ है। विलंब का सहारा लेने से किसी मुकदमेबाज को कोई लाभ नहीं होता है। वास्तव में, वह एक गंभीर जोखिम उठाता है।
6. यह समझना आवश्यक है कि न्यायपालिका का सम्मान तकनीकी आधारों पर अन्याय को वैध बनाने की उसकी शक्ति के कारण नहीं, बल्कि इसलिए है क्योंकि वह अन्याय को दूर करने में सक्षम है और उससे ऐसा करने की अपेक्षा की जाती है।

इस परिप्रेक्ष्य से न्याय-उन्मुख दृष्टिकोण अपनाते हुए, अपील संस्थित करने में हुए विलंब को माफ करने के लिए पर्याप्त कारण विद्यमान था। ..."

18. तत्पश्चात्, एन. बालकृष्णन बनाम एम. कृष्णमूर्ति के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसी कोई उपधारणा नहीं है कि न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में हुआ विलंब सदैव जानबूझकर होता है। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के



तहत प्रयुक्त शब्दावली "पर्याप्त कारण" का उदार निर्वचन किया जाना चाहिए ताकि सारवान् न्याय को बढ़ावा मिले। शकुंतला देवी जैन (पूर्वोक्त) और पश्चिम बंगाल राज्य बनाम प्रशासक, हावड़ा नगर पालिका में प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों को दोहराते हुए, माननीय न्यायाधीशों ने निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"9. यह स्वयं-सिद्ध है कि विलंब की माफी न्यायालय के विवेकाधिकार का विषय है। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 यह नहीं कहती है कि ऐसे विवेकाधिकार का प्रयोग केवल तभी किया जा सकता है जब विलंब एक निश्चित सीमा के भीतर हो। विलंब की अवधि का महत्व नहीं है, स्पष्टीकरण की स्वीकार्यता ही एकमात्र मापदंड है। कभी-कभी न्यूनतम अवधि का विलंब भी स्वीकार्य स्पष्टीकरण के अभाव में अक्षम्य हो सकता है, जबकि कुछ अन्य मामलों में, बहुत लंबी अवधि के विलंब को भी माफ किया जा सकता है यदि उसका स्पष्टीकरण संतोषजनक हो। एक बार जब न्यायालय स्पष्टीकरण को पर्याप्त मानकर स्वीकार कर लेता है, तो यह विवेकाधिकार के सकारात्मक प्रयोग का परिणाम होता है और सामान्यतः वरिष्ठ न्यायालय को ऐसे निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, विशेषकर पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में, जब तक कि विवेकाधिकार का प्रयोग पूरी तरह से असमर्थनीय आधारों पर या मनमाना या दोषपूर्ण न हो। लेकिन मामला तब भिन्न होता है जब प्रथम न्यायालय विलंब माफ करने से इनकार कर देता है। ऐसे मामलों में, वरिष्ठ न्यायालय विलंब के लिए दर्शाए गए कारण पर नए सिरे से विचार करने के लिए स्वतंत्र होगा और वरिष्ठ न्यायालय के लिए यह खुला है कि वह निचली अदालत के निष्कर्ष से अप्रभावित रहते हुए अपने स्वयं के निष्कर्ष पर पहुँचे।

10. इस भिन्न रुख का कारण इस प्रकार है: न्यायालय का प्राथमिक कार्य पक्षकारों के बीच विवाद का न्यायनिर्णयन करना और सारवान् न्याय को बढ़ावा देना है। विभिन्न परिस्थितियों में न्यायालय तक पहुँचने के लिए निर्धारित समय-सीमा इसलिए नहीं है कि उस समय की समाप्ति पर एक बुरा कारण अच्छे कारण में बदल जाएगा।

11. परिसीमा के नियम पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए नहीं हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए हैं कि पक्षकार विलंबकारी युक्तियों का



सहारा न लें, बल्कि अपने उपचार के लिए तत्परता से प्रयास करें। कानूनी उपचार प्रदान करने का उद्देश्य कानूनी क्षति के कारण हुए नुकसान की भरपाई करना है। परिसीमा की विधि ऐसी कानूनी क्षति के निवारण के लिए कानूनी उपचार की एक जीवन-अवधि निर्धारित करती है। समय कीमती है और बीता हुआ समय कभी वापस नहीं आता। समय बीतने के साथ नए कारण उत्पन्न होते हैं जिनके लिए नए व्यक्तियों को कानूनी उपचार हेतु न्यायालयों की शरण लेनी पड़ती है। इसलिए प्रत्येक उपचार के लिए एक जीवन-अवधि निर्धारित की जानी चाहिए। उपचार शुरू करने की अनंत अवधि से अनंत अनिश्चितता और परिणामी अराजकता उत्पन्न हो सकती है। इस प्रकार परिसीमा की विधि लोक नीति पर आधारित है। यह इस सिद्धांत में निहित है— *interest reipublicae ut sit finis litium* (राज्य के सामान्य कल्याण के लिए यह आवश्यक है कि मुकदमों का अंत हो)। परिसीमा के नियम पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए नहीं हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए हैं कि पक्षकार विलंबकारी युक्तियों का सहारा न लें बल्कि अपने उपचार के लिए तत्परता से प्रयास करें। विचार यह है कि प्रत्येक कानूनी उपचार को विधायिका द्वारा निर्धारित समय की अवधि के लिए जीवित रखा जाना चाहिए।

12. एक न्यायालय जानता है कि विलंब माफ करने से इनकार करने का परिणाम एक मुकदमेबाज को अपना पक्ष रखने से रोकना होगा। ऐसी कोई उपधारणा नहीं है कि न्यायालय तक पहुँचने में हुआ विलंब हमेशा जानबूझकर होता है। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत "पर्याप्त कारण" शब्दावली का उदार निर्वचन किया जाना चाहिए ताकि सारवान् न्याय को बढ़ावा मिले, जैसा कि शकुंतला देवी जैन बनाम कुंतल कुमारी (पूर्वोक्त) और पश्चिम बंगाल राज्य बनाम प्रशासक, हावड़ा नगर पालिका (पूर्वोक्त) में कहा गया है।

13. यह याद रखा जाना चाहिए कि विलंब के प्रत्येक प्रकरण में, संबंधित मुकदमेबाज की ओर से कुछ चूक हो सकती है। केवल इतना ही उसकी याचिका को खारिज करने और उसके लिए दरवाजे बंद करने के लिए



पर्याप्त नहीं है। यदि स्पष्टीकरण से दुर्भावना की गंध नहीं आती है या इसे विलंबकारी रणनीति के हिस्से के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है, तो न्यायालय को मुकदमेबाज के प्रति अत्यधिक विचारशीलता दिखानी चाहिए। लेकिन जब यह सोचने का उचित आधार हो कि विलंब पक्षकार द्वारा जानबूझकर समय प्राप्त करने के लिए किया गया था, तो न्यायालय को स्पष्टीकरण की स्वीकार्यता के विरुद्ध झुकना चाहिए। विलंब माफ करते समय न्यायालय को विपक्षी पक्ष को पूरी तरह से नहीं भूलना चाहिए। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि वह नुकसान उठाने वाला पक्ष है और उसने भी मुकदमेबाजी में काफी खर्च किया होगा। यह एक हितकारी दिशानिर्देश होगा कि जब न्यायालय आवेदक की ओर से हुई असावधानी के कारण विलंब को माफ करते हैं, तो न्यायालय को विपक्षी पक्ष को हुए नुकसान की भरपाई करनी चाहिए।”

19. तत्पश्चात्, हरियाणा राज्य बनाम चंद्र मणि एवं अन्य के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय को मामलों का निर्णय गुण-दोष के आधार पर करना चाहिए, जब तक कि मामला पूरी तरह से गुणहीन न हो। इसमें निम्नानुसार अवलोकन किया गया है: -

“11.

इसलिए, “पर्याप्त कारण” की अभिव्यक्ति पर प्रत्येक दिन के विलंब को स्पष्ट करने की तकनीकी छानबीन के बजाय न्याय-उन्मुख दृष्टिकोण में व्यवहारवाद के साथ विचार किया जाना चाहिए। वे कारक जो सरकारी स्थितियों के कामकाज के लिए विशिष्ट और लाक्षणिक हैं, उन्हें संज्ञान में लिया जाना चाहिए और न्याय-उन्मुख प्रक्रिया में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। न्यायालय को मामलों का निर्णय गुण-दोष के आधार पर करना चाहिए, जब तक कि मामला पूरी तरह से गुणहीन न हो। ...”

20. ईशा भट्टाचार्य बनाम रघुनाथपुर नफर एकेडमी की प्रबंध समिति एवं अन्य के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने विलंब माफी के आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय के दायित्व और अपनाए जाने वाले दृष्टिकोण को सारांशित करते हुए निम्नलिखित दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं: -



“21. उपरोक्त अधिकारियों (न्यायिक दृष्टांतों) से मोटे तौर पर जो सिद्धांत निकाले जा सकते हैं, वे इस प्रकार हैं:

21.1. (i) विलंब माफी के आवेदन पर विचार करते समय एक उदार, व्यावहारिक, न्याय-उन्मुख और गैर-पांडित्यपूर्ण दृष्टिकोण होना चाहिए, क्योंकि न्यायालयों से अन्याय को वैध बनाने की अपेक्षा नहीं की जाती है, बल्कि वे अन्याय को दूर करने के लिए बाध्य हैं।

21.2. (ii) “पर्याप्त कारण” शब्द को उसकी सही भावना, दर्शन और उद्देश्य में समझा जाना चाहिए, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि ये शब्द मूल रूप से लचीले हैं और इन्हें प्राप्त तथ्य-स्थिति के उचित परिप्रेक्ष्य में लागू किया जाना चाहिए।

21.3. (iii) सारवान् न्याय सर्वोपरि और केंद्रीय होने के कारण, तकनीकी विचारों को अनुचित और अनावश्यक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

21.4. (iv) विलंब जानबूझकर किए जाने की कोई उपधारणा नहीं जोड़ी जा सकती, किंतु अधिवक्ता या मुकदमेबाज की ओर से घोर लापरवाही को संज्ञान में लिया जाना चाहिए।

21.5. (v) विलंब माफी माँगने वाले पक्ष पर आरोपित सद्भाव की कमी एक महत्वपूर्ण और प्रासंगिक तथ्य है।

21.6. (vi) यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि कड़े सुबूत के पालन से सार्वजनिक न्याय प्रभावित नहीं होना चाहिए और न ही सार्वजनिक क्षति होनी चाहिए, क्योंकि न्यायालयों को सतर्क रहने की आवश्यकता है ताकि अंततः न्याय की वास्तविक विफलता न हो।

21.7. (vii) उदार दृष्टिकोण की अवधारणा में तर्कसंगतता की संकल्पना निहित होनी चाहिए और इसे पूरी तरह से अनियंत्रित छूट की अनुमति नहीं दी जा सकती।

21.8. (viii) अत्यधिक विलंब और अल्प अवधि या कुछ दिनों के विलंब के बीच अंतर है, क्योंकि पूर्ववर्ती (अत्यधिक विलंब) में प्रतिकूल प्रभाव का सिद्धांत आकर्षित होता है, जबकि उत्तरवर्ती (अल्प विलंब) में यह





आकर्षित नहीं हो सकता है। इसके अलावा, पहला मामला सख्त दृष्टिकोण की मांग करता है जबकि दूसरा उदार चित्रण की।

21.9. (ix) किसी पक्ष की निष्क्रियता या लापरवाही से संबंधित उसका आचरण, व्यवहार और दृष्टिकोण विचारार्थ प्रासंगिक कारक हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि मूलभूत सिद्धांत यह है कि न्यायालयों को दोनों पक्षों के संबंध में न्याय के संतुलन को तौलना आवश्यक है और उदार दृष्टिकोण के नाम पर उक्त सिद्धांत को पूरी तरह से त्याग नहीं दिया जा सकता है।

21.10. (x) यदि दिया गया स्पष्टीकरण मनगढ़ंत है या आवेदन में दिए गए आधार काल्पनिक हैं, तो न्यायालयों को सतर्क रहना चाहिए ताकि दूसरे पक्ष को अनावश्यक रूप से ऐसी मुकदमेबाजी का सामना न करना पड़े।

21.11. (xi) यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि परिसीमा विधि की तकनीकी बारीकियों का सहारा लेकर कोई भी व्यक्ति धोखाधड़ी, मिथ्या निरूपण या हेराफेरी करके बच नहीं सकता है।

21.12. (xii) तथ्यों के संपूर्ण विस्तार की सावधानीपूर्वक संवीक्षा की जानी चाहिए और दृष्टिकोण न्यायिक विवेकाधिकार के प्रतिमान पर आधारित होना चाहिए जो वस्तुनिष्ठ तर्क पर आधारित हो न कि व्यक्तिगत धारणा पर।

21.13. (xiii) राज्य या किसी सार्वजनिक निकाय या सामूहिक हित का प्रतिनिधित्व करने वाली संस्था को कुछ स्वीकार्य छूट दी जानी चाहिए।”

22. उपरोक्त सिद्धांतों में हम वर्तमान परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए कुछ और दिशानिर्देश जोड़ सकते हैं। वे इस प्रकार हैं:

22.1. (क) विलंब माफी के लिए आवेदन सावधानीपूर्वक तैयार किया जाना चाहिए, न कि इस धारणा के साथ बेतरतीब ढंग से कि न्यायालय इस सिद्धांत की आधारशिला पर विलंब को माफ करने के लिए बाध्य हैं कि गुण-दोष के आधार पर वाद का न्यायनिर्णयन न्याय वितरण प्रणाली के लिए मौलिक है।



22.2. (ख) विलंब माफी के आवेदन को व्यक्तिगत दर्शन के आधार पर नियमित तरीके से नहीं निपटाया जाना चाहिए जो कि मूल रूप से व्यक्तिपरक है।

22.3. (ग) यद्यपि न्यायिक विवेकाधिकार की अवधारणा को देखते हुए कोई सटीक सूत्र निर्धारित नहीं किया जा सकता है, फिर भी न्यायनिर्णयन प्रणाली की निरंतरता और सामूहिकता प्राप्त करने के लिए एक सचेत प्रयास किया जाना चाहिए क्योंकि यही अंतिम संस्थागत ध्येय है।

22.4. (घ) विलंब को एक गैर-गंभीर प्रकरण के रूप में देखने की बढ़ती प्रवृत्ति और इसके परिणामस्वरूप बेपरवाह तरीके से प्रदर्शित किए जाने वाले उत्साहहीन झुकाव को कानूनी मापदंडों के भीतर रहते हुए अंकुश लगाने की आवश्यकता है।”

21. तत्पश्चात, मनोहरन बनाम शिवराजन एवं अन्य के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय ने कलेक्टर, भूमि अर्जन, अनंतनाग (पूर्वोक्त) में प्रतिपादित विधि के सिद्धांत का अनुसरण किया।

22. ऊपर उल्लिखित निर्णयों का सिंहावलोकन यह दर्शाता है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों ने स्पष्ट रूप से संकेत दिया है कि 'पर्याप्त कारण' का अर्थ निकालते हुए विलंब माफी के आवेदन पर विचार करने में एक उदार दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए और अपील का निर्णय गुण-दोष के आधार पर किया जाना चाहिए, जब तक कि मामला पूरी तरह से गुणहीन न हो। आयकर अधिनियम की धारा 253(5) के अर्थ के भीतर "पर्याप्त कारण" का उदारतापूर्वक अर्थान्वयन किया जाना चाहिए ताकि सारवान् न्याय को बढ़ावा मिले, विशेष रूप से तब जब विलंब जानबूझकर न किया गया हो और न ही दुर्भावना का परिणाम हो।

23. वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लौटते हुए, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी संस्था द्वारा प्रस्तुत अपील में 55 दिनों का विलंब हुआ था, जिसके लिए कारण, विशेषकर पर्याप्त कारण दर्शाया जाना आवश्यक है। अपीलार्थी ने स्पष्ट किया है कि पंजीकरण के लिए पुनः आवेदन करने की अपने अधिवक्ता की गलत सलाह के कारण, उसने पहले पंजीकरण हेतु आयकर अधिनियम की धारा 12 क के तहत नए सिरे से आवेदन प्रस्तुत किया था। तत्पश्चात, पंजीकरण के दूसरे आवेदन के निर्णय में विलंब होने और अपनी भूल का एहसास होने के कारण, उसने 55 दिनों के विलंब के साथ अपील प्रस्तुत की; इस प्रकार अपील दायर करने में विलंब हुआ। यह तथ्य अप्रतिवादित रहा, क्योंकि राजस्व द्वारा परिसीमा की अवधि के भीतर अपील प्रस्तुत न करने के बताए गए कारणों और तथ्यों का खंडन करते हुए कोई जवाब दाखिल नहीं किया गया था। इस प्रकार, शपथ-पत्र द्वारा समर्थित आवेदन में विलंब के लिए दर्शाया गया कारण अप्रतिवादित रहता है और यह आयकर अधिनियम की धारा 253(5) के अर्थ के अंतर्गत "पर्याप्त



कारण" गठित करेगा। विलंब माफी के आवेदन को खारिज करने के संस्था की स्थिति पर गंभीर दीवानी परिणाम होते हैं, क्योंकि अपीलार्थी संस्था के आवेदन के खारिज होने से, संस्था आयकर अधिनियम की धारा 11 और 12 के प्रावधानों के तहत कर छूट का दावा नहीं कर पाएगी, और वह भी राजस्व द्वारा शपथ-पत्र समर्थित विलंब माफी आवेदन का विरोध करने वाले प्रति-शपथपत्र के अभाव में। आयकर अपीलीय अधिकरण को अपील दायर करने में हुए विलंब को माफ कर देना चाहिए था क्योंकि ऐसा कोई आरोप नहीं है कि अपील दायर करने में हुआ विलंब दुर्भावनापूर्ण है या जानबूझकर किया गया है, बल्कि यह पंजीकरण के लिए पुनः आवेदन करने की अधिवक्ता की गलत सलाह पर आधारित सद्भावी भूल है।

24. उस दृष्टि से, आयकर अपीलीय अधिकरण, रायपुर पीठ, रायपुर द्वारा आई.टी.ए. क्रमांक 304/आरपीआर/2024 में पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 20-09-2024 को अपास्त किया जाता है और अपील प्रस्तुत करने में हुए 55 दिनों के विलंब को एतद्द्वारा माफ किया जाता है। अपील को आयकर अपीलीय अधिकरण की फाइल में उसके मूल नंबर पर पुनर्स्थापित किया जाता है। प्रकरण को आयकर अपीलीय अधिकरण को इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से तीन महीने के भीतर गुण-दोष के आधार पर नए सिरे से विचार करने और निर्णय लेने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है। यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय ने प्रकरण के गुण-दोष पर कोई राय व्यक्त नहीं की है।

25. तदनुसार, कर अपील स्वीकार की जाती है। वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जा रहा है।

सही /- (संजय के. अग्रवाल) न्यायाधीश	सही /- (राधाकिशन अग्रवाल) न्यायाधीश
---	---

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।